भाग-2 खण्ड 3 - 4

चैतन्य लहरी

1990

शुभ जन्म दिन विशेषांक

श्रीमाता जी की दक्षिण भारत यात्रा

आदि शक्ति ने हैदराबाद, मद्रास, बैंगलोर तथा अहमदाबाद को आशीर्वादित किया। परम चैतन्य ने सुन्दरता-पूर्वक सारा आयोजन किया जिससे प्रेम और आनन्द लहरियों ने भिन्न समुदायों के जिज्ञासुओं के हृदय को खोल दिया।

प्रोग्राम के बाद श्री माता जी ने लोगों की समस्याओं को सुलझाने के लिये तथा उनके चक्रों को शुद्ध करने के लिये कई घंटे लगायें। बहुत से लोगों की भयंकर और घातक बीमारियों का इलाज हुआ।

हैदराबाद में हम अकस्मात ही शालीवाहन सम्राट की महान मूर्ति के पास पहुँचे। यह सम्राट श्री माता जी के पूर्वजों में से थे। श्रीमाता जी ने बताया कि शालीवाहनों ने इस क्षेत्र में बहुत समय तक राज्य किया। मद्रास में श्री माता जी ने कहा कि सहजयोग लोगों की भक्ति की प्रतिपूर्ति है और अब समय आ गया है कि सहस्त्रों जिज्ञासुओं को एक साथ ही आत्म साक्षात् प्राप्त हो सकें। बैंगलौर में महिषासुर मर्दिनी की एक अन-आयोजित पूजा हुई क्यों सभी सहजयोगियों ने महिषासुर वध की कामना की थी। श्री माता जी, श्री कृष्ण की भूमि गुजरात से बहुत प्रसन्न थी और वहां के लोगों का हृदय बहुत विशाल है। उनको बहुत ही सुगमता से आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हुआ। श्री माता जी ने बहुत ही प्रेम की वर्षा की तथा बहुत सी सुन्दर सुन्दर बातें कहीं। यह सब इस चैतन्य लहरी के इस अंक में छापी गयी हैं।

हैदराबाद पूजा वार्ता (25-2-1990)

श्री माता जी निर्मला देवी

आप सब लोगों को मिलकर बड़ा आनन्द आया। मुझे इसकी कल्पना भी नहीं थी कि इतने सहजयोगी हैदराबाद में हो गए हैं। ये विशेषता हैदराबाद की है कि सब तरह के लोग आपस में घुलमिल गए हैं। अब हम लोगों को सहज योग की ओर नए तरीके से मुड़ना है। यह जान लेना आवश्यक है कि सहज योग सत्य स्वरूप है और हम लोग सत्यनिष्ठ हैं इसलिए हमें असत्य को त्याग देना है वरना हममें शुद्धता नहीं आ सकती। वास्तव में असत्यता एक भ्रम है और उससे निकलने के लिए हमें निश्चय कर लेना चाहिए। ऐसी शुद्ध इच्छा मात्र से ही कुण्डलिनी, जो हमारे अन्दर जागृत है, हमारे सामने ऐसी स्थिति ला देती है कि हम सत्य और असत्य के भेद को जान जाते हैं और केवल सत्य प्राप्त करने की ही इच्छा करने लगते हैं। हमें अपनी सारी गलत धारणाओं को त्याग कर केवल सत्य को अपनाना चाहिए। जैसे कि एक धारणा कि गीता में लिखा है कि आपकी जाति जन्म से निर्धारित होती है, परन्तु यह सत्य नहीं है क्योंकि व्यासजी जिन्होंने गीता लिखी, वे स्वयं एक मछियारन के ऐसे पुत्र थे जिनके पिता का भी पता नहीं था इसलिए व्यास जी तो ऐसी बात लिख ही नही सकते। ऐसा कहा गया है "या देवी सर्वभूतेषू जाति रूपेण संस्थिता" यानि कि सबके अन्दर बसी उसकी जाति अर्थात जन्मजात स्वभाव होता है। कुछ लोगों को पैसे की खोज में, कुछ को सत्ता में और कुछ को परमात्मा की खोज में रुझान है। सहज योग में प्रथम वही लोग आएँगे जो परमात्मा को खोजते हैं और परम ही को पाना चाहते हैं। जब मनुष्य का सहज योग की ओर रुझान हो जाता है तो कभी कभी उसे दुख होता है कि सहज योग इतनी धीरे धीरे क्यूँ बढ़ रहा है। लेकिन हमको यह जान लेना चाहिए जो जीवन्त चीज़ होती है वह धीरे धीरे पनपती है जैसे कि एक वृक्ष का धीरे-धीरे बढ़ना और उस पर पहले एक दो फूलों और फिर धीरे-धीरे अनेकों फूलों का आना। सहज योग एक जीवन्त चीज है और इसमें हम किसी से ज़बरदस्ती नहीं कर सकते। हम किसी को यूँ ही कह दें कि आप पार हो गए, तो नहीं हो सकता। यह "होना" पड़ता है और जब तक यह घटित नहीं होता हम किसी को यूँ ही झूठा प्रमाण पत्र नहीं दे सकते। और सभी लोग पार हो जाएँगे ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। अनेक कारणों से कई लोग पार नहीं होते। अधिकतर लोग तो सोचते हैं कि इसके लिए तो इतनी तपस्या करनी पड़ती थी, हिमालय जाना पड़ता था, तो अब यह इतना सहज और सरल कैसे हो सकता है? उन्हें विश्वास नहीं होता क्योंकि उनमें आत्म-विश्वास नहीं है और वे समझ नहीं पाते कि आज का समय ही ऐसा है जब यह कार्य सहज ही होना है। जब आत्म साक्षात्कार हो जाता है और परम-चैतन्य से एकाकारिता हो जाती है तो यह ज्ञात हो जाता है कि हमारे सारे कार्य परम चैतन्य ही करवाता है और हम अकर्म में उतर जाते हैं, कोई चिन्ता ही नहीं रहती। लेकिन सहजयोग में आने के बाद शुरू शुरू में कभी मनुष्य जब अल्प दृष्टि से सोचता है तो स्वयं को कर्ता समझ बैठता है। परन्तु धीरे-धीरे अनुभवों के आधार पर उसे समझ आ जाता है कि उसके करने से कुछ नहीं होता और विश्वास हो जाता है कि परम चैतन्य ही सब कार्य करता है। तब अपने आप सब कार्य बनते जाते हैं। यदि कभी कभी कोई कार्य हमारे मन के विरोध में हो जाए तो यह नहीं सोचना चाहिए कि परमात्मा ने हमारी मदद नही की। वास्तव में परमात्मा से अधिक न तो हम सोच सकते है, न कर सकते हैं। इसलिए यह मान लेना चाहिए कि हमारे लिए जो उचित था वह परम चैतन्य ने कर दिया और जो कुछ हो रहा है वह सब अत्यन्त सुन्दर है।

सहज योग के दो अंग है और एक सहजयोगी को इन दोनों अंगों को सम्भालना चाहिए। 1-पहले तो व्यक्तिगत रूप से ध्यान धारणा द्वारा हमें अपने अन्दर के दोषों को जान लेना चाहिए और समझ लेना चाहिए कि हमारी कौन सी दशा है अर्थात हम Right Sidedहैं या Left Sided ,हमारे कौन-कौन से चक्र में दोष है, फोटो की ओर ध्यान करके यह सब जाना जा सकता है। उसके बाद ध्यान धारणा द्वारा उन दोषों को दूर कर लेना चाहिए। सहजयोग में ध्यान धारणा की प्रणाली बहुत ही सरल है। सुबह-शाम 10-15 मिनट बैठने से भी ध्यान धारणा हो जाती है। अपने दोषों को दूर करने के बाद हमें सामूहिकता में उतरना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि हम अपना हृदय खोल दें। संकुचित प्रवृत्ति का व्यक्ति कभी सामूहिक नहीं हो सकता। हमें दूसरों के दोष नही देखने चाहिए क्योंकि इससे दूसरों के सब दोष हमारे अन्दर आ जाते हैं। हमें दूसरों के गुण, अच्छाई और सुन्दरता देखनी चाहिए इससे हमारे अन्दर सुन्दरता आ जाएगी और दूसरों के दोष भी लुप्त हो जाएँगे। ये जानना चाहिए कि दूसरे स्वयं से अलग नहीं है इसलिए उनके दोषों को प्रेमशक्ति द्वारा दूर करना चाहिए। प्रेम ही सत्य है और सत्य ही प्रेम है, जो प्रेम की शक्ति का इस्तेमाल करता है वह बहुत ऊँचा उठ जाता है। हृदय को खोल करके, प्रेम से, आपको दूसरों की ओर देखना है। आप व्यक्तिगत दृष्टि में और समष्टि में प्रगति करते हैं। जो व्यक्ति सामूहिकता में नहीं उतरता उससे बचकर रहना चाहिए। किसी भी सहजयोगी की निन्दा सुनना हमारे सहज योग में एक पाप सा है। हमें देखना चाहिए कि हम कितने प्यार से बोल सकते हैं और हममें कितनी क्षमा-शक्ति है। सभी सहजयोगियों को अपना रिश्तेदार समझना चाहिए।

सहजयोग का दूसरा अंग है सहज योग का ज्ञान होना और सहज योग का प्रचार। सहज योग में इस ज्ञान का समझ लेना चाहिए कि किस चक्र में दोष होने से हाथ या पैर की कौन सी उँगली पकड़ती है, उससे क्या बीमारियां हो सकती हैं, उसका निवारण कैसे करना चाहिए, दूसरों को कैसे ठीक कर सकते हैं आदि सारा कुण्डलिनी का ज्ञान प्राप्तकर लेना चाहिए, विशेषकर स्त्रियों के लिए अति आवश्यक है क्योंकि स्त्री शक्ति स्वरूपिणी है। इस ज्ञान से स्त्रियां सहज के बच्चों को भी समझ जाएँगी कि सहज में पैदा हुए बच्चों के कार्य ऐसे क्यूं हैं उनका क्या अर्थ हैं। बुद्धि से इसका ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है। और दूसरी जो चीज़ बहुत जरूरी है, वह है सहजयोग का प्रचार। गर आप एक कमरे में बैठे हैं और एक ही दरवाजा खुला है और दूसरा दरवाजा आपने खोला नहीं तो हवा का प्रवाह रुक जाएगा। इसी प्रकार यदि आप सहजयोग से दूसरों को प्लावित नहीं करते, उनकी मदद नहीं करते, उनको आत्म साक्षात्कार नहीं देते, उसका प्रचार नहीं करते तो आप प्रगति नहीं कर सकते। क्योंकि जब पेड़ बढ़ता है तो उसकी शाखाएँ बढ़नी चाहिए और उन शाखाओं की छाया में अनेक लोगों को बैठना चाहिए। यह तो वृक्ष की बात है पर आप तो वट-वृक्ष के समान हैं इसलिए आपको पूरी तरह से सहजयोग के प्रचार में सहायता करनी चाहिए। उसके प्रति हमें पूरी तन-मन-धन से समर्पित होना चाहिए। कुछ सहजयोगी ऐसे भी है जो पूरा समय सहजयोग का ही विचार करते रहते हैं। ऐसे लोगों के सब प्रश्न छूट जाते हैं और वे सदा आनन्द की स्थिति में रहते हैं। हम सब पर एक बड़ा भारी उत्तरदायित्व है कि हम ऐसे समाज का निर्माण करें जो शुद्ध, निर्मल, हो उसी में हमारी धारणा रहे और उस धर्म में हम स्थित रहें।

आप सबको मेरा अनन्त आशीर्वाद।

हैदराबाद पब्लिक प्रोग्राम (6-7 फरवरी, 1990)

श्री माताजी निर्मला देवी

सत्य को खोजने वाले आप सभी साधकों को हमारा नमस्कार।

कल मैंने सत्य के बारे में बताया था कि सत्य अपनी जगह अटूट और अनन्त है। उसे हम अपने मन, बुद्धि से बदल नहीं सकते, और सत्य यह है कि हम आत्मा हैं। लेकिन परम सत्य यह है कि सारी सृष्टि इस चराचर में सूक्ष्मता से फैले हुए ब्रह्म चैतन्य के सहारे चल रही है और इसी परम चैतन्य की कृपा से ही आज हम मनुष्य स्थिति में पहुँचे हैं। यह परम चैतन्य हमें वह शुद्ध ज्ञान दे सकता है जिससे हम जान सकें कि हम क्या हैं, कहाँ हैं, हमारी क्या स्थिति है और हमारा लक्ष्य क्या है। इसी शुद्ध ज्ञान से हम आत्मा स्वरूप हो जाते हैं और आत्मा एक सामूहिक वस्तु होने से हममें सामूहिक चेतना का प्रादुर्भाव होता है और हमें ज्ञात हो जाता है कि हम विराट के ही अंग प्रत्यंग हैं।

जब हम परम चैतन्य से एकाकारिता पा लेते हैं तो हमारा चित्त उसके प्रकाश से आलोकित हो जाता है। इस आलोकित चित्र से हम बहुत कुछ जान सकते हैं जो हमने पहले कभी नहीं जाना। इस परम चैतन्य से एकाकारिता प्राप्त करना बहुत सहज है। "सहज" के दो अर्थ हैं - 1-आपके साथ पैदा हुआ, 2· सरल अथवा आसान। यदि कोई चीज हमारी उत्क्रान्ति के लिए अत्यावश्यक है अथवा मूलभूत है तो वह सहज ही होनी चाहिए जैसे कि जीवित रहने के लिए हमारा श्वास लेना अत्यावश्यक है, और वह हम सहज ही लेते हैं। इसी प्रकार परम चैतन्य से एकाकारिता की घटना भी सहज में ही घटित होनी चाहिए। कारण यह है कि यह एक जीवन्त शक्ति है और इसी के द्वारा हम अमीबा से मनुष्य स्थिति में पहुंचे हैं। यही शक्ति हमारे अन्दर कार्यान्वित होती है और हम इस ऊँची दशा में पहुँच जाते हैं अर्थात आत्मा स्वरूप हो जाते हैं।

कल आपको मैंने कुण्डलिनी के बारे में बताया था कि कुण्डलिनी शक्ति हमारे अन्दर Sacrum नामक त्रिकोणाकार अस्थि में 3-1/2 कुण्डलों में है और इसमें शक्ति के अनेक तन्तु हैं। इस कुण्डलिनी के नीचे मूलाधार चक्र है जो कुण्डलिनी का घर है। यह बहुत ही महत्वपूर्ण चक्र है और इसी के द्वारा कुण्डलिनी को सब कुछ ज्ञात होता है। यह चक्र हमारी अबोधिता या भोलेपन का चक्र है। जब हम बच्चे होते हैं तो हममे बहुत ही भोलापन होता है। जैसे जैसे हम बड़े होते हैं, इस चक्र पर आघात आते हैं तो हमारा भोलापन कम होता जाता है। यह चक्र हमारे Pevic Plexus को सम्भालता है और उत्सर्क निसर्ग के सारे कार्य करता है। यह चक्र हमारी पवित्रता का चक्र है और जो लोग रजनीश की तरह गन्दी बातें सिखाते है कि Sex करने से कुण्डलिनी का जागरण होता है, यह महापाप है और समझ लेना चाहिए कि वे हमें पतन की ओर ले जा रहे हैं। यह चक्र तो कमल की भाँति है जिस पर गन्दगी का कोई छींटा नहीं ठहर सकता। हाँ कभी गन्दगी इस चक्र को ढक अवश्य सकती है परन्तु यह चक्र और इसकी पवित्रता कभी नष्ट नहीं होती। जब कभी इस चक्र में दोष आता है या गन्दगी इसे ढक लेती है तो एड्स (AIDS) जैसी घातक बीमारियाँ और अन्य कई Psychosomatic अर्थात मानसिक बीमारियाँ हो जाती हैं। इसी चक्र से इड़ा नाड़ी अर्थात् चन्द्र नाड़ी ऊपर की ओर जाकर एक संस्था तैयार करती है जो कि एक तरह से हमारा मन है। जब इस मन में कई तरह के कुसंस्कार

भर जाते हैं तो यह गुब्बारे की तरह फूल कर सिर में छा जाता है जिसे हम Super ego या प्रीत अहंकार कहते हैं। ऐसी स्थिति में गर हम किसी गलत गुरु या तांत्रिक के पास चले जाएं या गलत धर्म को अपना लें तो इससे चन्द्र नाड़ी में बहुत दोष आ जाते हैं जिससे हम पागलपन जैसे कई मानसिक विकारों से ग्रसित हो जाते हैं।

मूलाधार चक्र से ऊपर दूसरा चक्र स्वाधिष्ठान चक्र कहलाता है जो सूर्य की गति से चलता है और इसी चक्र से हमारी दांयी ओर की पिंगला (सूर्य नाड़ी) नाड़ी चलती है जो हमें कार्य करने की शक्ति देती है। चन्द्र नाड़ी इच्छा शक्ति की और सूर्य नाड़ी क्रिया शक्ति की जोड़ी है। क्रिया दो प्रकार की होती है - शारीरिक एवं बौद्धिक क्रिया। दोनों ही क्रियाएं हम सूर्य नाड़ी से करते हैं। जब सूर्य नाड़ी अधिक चलती है तो उसका प्रभाव स्वाधिष्ठान चक्र पर पड़ता है। बहुत पढ़ने लिखने या अधिक सोचने से इस चक्र में दोष आ जाता है। स्वाधिष्ठान चक्र हमारे जिगर (Liver) और प्लीहा (Spleen) आदि को नियंत्रित कर उसके द्वारा हमारे मस्तिष्क में Grey Cells भेजता है। अति सोचने से Grey Cells का इस्तेमाल बहुत होता है और स्वाधिष्ठान चक्र में दोष आने से नए Grey Cells बन नहीं पाते। ऐसे में मनुष्य पागल सा हो जाता है और उसे कई बीमारियां हो जाती हैं। इस प्रकार जब हम भविष्य के बारे में ज्यादा सोचते हैं तो हमारी सूर्य नाड़ी अधिक चलती है और जब भूतकाल के बारे में ज्यादा सोचते हैं तो चन्द्र नाड़ी अधिक चलती है और जब इन दोनों में सन्तुलन नहीं आता तब तक इन दोनों के बीच की नाड़ी, जिसे हम सुषुम्ना नाड़ी या महालक्ष्मी की नाड़ी कहते हैं, कार्यान्वित नहीं होती। जब हम सब चीजों से ऊब कर परमात्मा की खोज आरम्भ करते हैं तो सुषुम्ना नाड़ी का कार्य शुरु होता है। सुषुम्ना नाड़ी के अन्दर एक बड़ी सूक्ष्म सी नाड़ी होती है जिसे हम ब्रह्म नाड़ी कहते हैं। जब कुण्डलिनी जागृत होती है तो इसी ब्रह्म नाड़ी में से कुण्डलिनी शक्ति के पहले दो चार धागे और फिर धीरे-धीरे अनेकों धागें या सूत्र ऊपर की ओर उठते हैं। इस प्रकार ईड़ा, पिंगला और सुषुम्ना यह तीन नाड़ियां हमारे अन्दर हैं जो आज्ञा चक्र पर मिलती हैं -

जब कुण्डलिनी आज्ञा चक्र से गुजरती है तो यह चक्र जागृत हो जाता है जिससे अहंकार और प्रीत अहंकार की दोनों संस्थाएं अन्दर की ओर खिंच जाती है और मध्य में जगह बन जाती है और कुण्डलिनी उसी से होते हुए हमारे ब्रह्माण्ड का छेदन कर हमारे सहस्त्रार से बाहर आ जाती है और हम अपने सर के तालू भाग के ऊपर ठंडी ठंडी लहरियों का अनुभव करते हैं। इस प्रकार परमात्मा से हमारा योग घटित होता है। इसी को आत्म साक्षात्कार कहते हैं। आत्मा का स्थान तो आपके हृदय में है परन्तु सातों चक्रों के पीठ आपके सर में हैं। जब कुण्डलिनी शक्ति ब्रह्मरन्ध्र के छेदन करती है तो हृदय में उसका प्रकाश चला जाता है और आत्मा का सम्बन्ध हमारे चित्त से होने के कारण यह चित्र आलोकित हो जाता है फिर आप स्वयं ही अपने गुरु हो जाते हैं क्योंकि आपकी आत्मा ही आपको प्रकाश देती है और आप इन चैतन्य लहरियों से जान सकते हैं कि आप क्या कर रहे हैं, आप में क्या दोष है और फिर आप स्वयं ही उसे ठीक भी कर सकते हैं फिर आप सामूहिक चेतना में उतर जाते हैं अर्थात दूसरों के बारे में भी जान सकते है कि उनमें क्या दोष हैं, उन्हें क्या बीमारियां हैं, और फिर उन्हें ठीक भी कर सकते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कुण्डलिनी हमारी शुद्ध इच्छा है और बाकी हमारी जितनी भी इच्छाएं हैं वे अशुद्ध हैं इसीलिए किसी भी इच्छा पूर्ति से मनुष्य को पूर्ण सन्तोष

नही मिलता और यह तो अर्थशास्त्र का सिद्धांत है कि पूरी इच्छाएँ कभी पूर्ण नही होती। परन्तु जब कुण्डलिनी अर्थात शुद्ध इच्छा हमारे अन्दर जागृत हो जाती है तो हम सारी इच्छाओं को साक्षी स्वरूप में देखते हैं और निश्चिन्त हो जाते हैं।

मैंने आपको तीन नाड़ियों और मूलाधार चक्र तथा स्वाधिष्ठान चक्र के विषय में बताया। इन दो चक्रों के अतिरिक्त हमारे अन्दर नाभिचक्र, हृदय या अनहत चक्र, विशुद्धि चक्र, आज्ञा चक्र और सहस्त्रार चक्र हैं। इन चक्रों के बारे में आप हमारी किताबों में पढ़ सकते हैं और जान सकते हैं। इन चक्रों और तीन नाड़ियों का महत्व इस तरह से भी समझा जा सकता है - जैसे कि हम देखें कि कैंसर कैसे ठीक होता है और वह सहजयोग में कैसे ठीक हो जाता है। जब ईड़ा और पिंगला नाड़ी में असन्तुलन आता है तो उन दोनों से जुड़े सभी चक्रों में भी असन्तुलन आ जाता है और चक्रों के बीच की जगह, जहां से सुषुम्ना नाड़ी से होती हुई कुण्डलिनी शक्ति ऊपर की ओर जाती है, छोटी हो जाती है। इससे चक्र कुण्डलिनी शक्ति द्वारा पूर्ण रूप से प्रभावित और प्लावित नहीं हो पाते जिससे चक्रों की शक्ति कम हो जाती है और इस तरह से चक्रों के दोष अथवा कमजोरी की वजह से बीमारी होने लगती है और जब कोई चक्र बिल्कुल टूट जाता है तब हमारे मेरुदण्ड का सम्बन्ध भी हमारे मस्तिष्क से टूट जाता है और मस्तिष्क का शरीर पर नियन्त्रण समाप्त हो जाने से शरीर के किसी भी भाग की कोशिकाओं (Cells) में असन्तुलत वृद्धि होने लगती है और इस तरह से कैंसर का रोग घटित होता है। अब जब कुण्डलिनी का जागरण होता है तो वह टूटे हुए चक्र को अपनी शक्ति द्वारा जोड़ने लगती है और धीरे धीरे चक्र की शक्तिहीनता भी समाप्त हो जाती है। तथा मेरुदण्ड का सम्बन्ध फिर से मस्तिष्क के साथ स्थापित हो जाता है। इससे शरीर की अनियंत्रित वृद्धि समाप्त हो जाती है और कैंसर ठीक हो जाता है। इसी प्रकार अनेक रोग ठीक हो सकते हैं क्योंकि इन चक्रों की ही खराबी के कारण बीमारी आती है और जब यह चक्र ठीक हो जाते हैं, तो बीमारी भी ठीक हो जाती है।

सहज योग से शारीरिक, मानसिक, भौतिक लाभ तो होते ही है परन्तु सबसे बड़ी चीज़ यह है कि आध्यात्मिक उन्नति को प्राप्त करते हैं। आप अपने गुरु हो जाते हैं और आप समर्थ भी हो जाते हैं और सब बुरी आदतें, जो पहले आप नहीं छोड़ पाए, अब स्वयं छूट जाती हैं। आपमें सन्तुलन आ जाता है और चक्र पूरी तरह से खुलना शुरु हो जाते हैं। स्वभाव में दया, प्रेम, छलकने, लगता है, मुख पर कान्ति आ जाती है। सोचने का दृष्टिकोण और जीवन मूल्य बदल जाते हैं। आप निर्विचारिता में उतर जाते हैं और आनन्द के सागर में रहने लगते हैं। आपका सम्बन्ध परम चैतन्य से होने के कारण परम चैतन्य आपकी सारी गतिविधियों को सम्भालता है और आपको पूरी तरह से आशीर्वादित करता है। इसका अनुभव आपको होने लगता है और आप आश्चर्यचकित होते हैं कि किस तरह से हर एक चीज़ अपने आप घटित होने लगती है। आप परमात्मा के साम्राज्य में आ जाते हैं जो अत्यन्त दक्ष, कुशल एवं प्रेममय है और वह आपको इतना सम्भालता है कि आप आश्चर्यचकित हो जाते हैं कि मेरा इतना गौरव और शक्ति कहां से आ गई। यह सब आपके अन्दर है और आपको इसे प्राप्त करना चाहिए और इससे अपने और सबके जीवन को खुशहाल बनाना चाहिए। यह हुए बगैर संसार बदल नहीं सकता आप विशेष लोग हैं जो इस योग भूमि में पैदा हुए है। आप पर इस विश्व के प्रति एक विशेष उत्तरादायित्व है। इसीलिए आप इस योग को प्राप्त करें और उसमें स्वयं को स्थापित करें। आज वह समय आ गया है जब यह घटित होना ही चाहिए।

इसके बाद श्रीमाता जी ने कुछ प्रश्नों के उत्तर दिये जिनमें से मुख्य इस प्रकार हैं :-

1- जब यह प्रश्न पूछा गया कि T.M.(Transcendental Meditation) क्या है तो श्रीमाता जी ने अनेकों उदाहरण ऐसे लोगों के दिए जो T.M.के कारण बहुत बुरी दशा में पहुंच गए थे, उनको कई तरह की बीमारियां हो गई थी और फिर सहज योग में ठीक होने के लिए आए। सहज योग में ठीक होने पर उन्होंने जाना कि टी0एम0 कितनी बुरी चीज् है। इस प्रकार गलत लोग गुरु बन कर लोगों का खूब आर्थिक और मानसिक शोषण करते हैं, उन्हें मूर्ख बनाते हैं और शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से बुरी दशा में पहुंचा देते हैं।

2- प्रश्न - क्या कुण्डलिनी केवल सुषुम्ना नाड़ी से ही ऊपर चढ़ती है या ईड़ा पिंगला से भी चढ़ सकती है।

उत्तर : जब कुण्डलिनी जागृत होती है तो केवल सुषुम्ना नाड़ी से ऊपर चढ़ती है परन्तु जब कोई कुण्डलिनी जागृत करने की अनाधिकार चेष्ट करता है तो मूलाधार चक्र पर बैठे श्री गणेश जी अत्यन्त क्रोधित हो जाते हैं और उसकी वजह से ईड़ा और पिंगला नाड़ी में अत्याधिक गर्मी उत्पन्न होती है जिससे कई तरह की समस्याएँ हो सकती हैं। इसलिए कुण्डलिनी जागृत करने का अधिकार परमात्मा से प्राप्त होना चाहिए।

3- प्रश्न - पातांजली योग और सहज योग में क्या अन्तर है। इसका नाम सहज योग क्यूँ रखा गया।

उत्तर :- पातांजली योग के बारे में हजारों वर्ष पूर्व बताया गया और उसमें यम, नियम आदि अष्टांग योग द्वारा कुण्डलिनी जागरण की व्यवस्था का वर्णन है पर इसमें कई जन्म लग जाते थे। परन्तु अब यह सहज योग है क्योंकि अब इस तरह के लोग भी है और समय भी है - कलियुग का वह समय जिसका वर्णन हमारे आदि ग्रन्थों में किया गया है। आज के समय में आत्म साक्षात्कार सबको सहज में ही प्राप्त होना है इसका नाम सहज योग रखा है।

अहमदाबाद प्रोग्राम (सारांश)

15-16/2/1990

श्री माता जी निर्मला देवी

अहमदाबाद प्रोग्राम में श्री माता जी ने कुण्डलिनी जागरण, ईड़-पिंगला, सुषुमना, नाड़ियों और सभी चक्रों के बारे में बताया जिसका वर्णन वे कई बार कर चुकी हैं। उन्होंने बताया कि किस प्रकार असन्तुलन के कारण हमें अनेक रोग हो जाते हैं और कैसे कुण्डलनी जागरण द्वारा सन्तुलन स्थापित कर हम उन रोगों से मुक्त हो सकते हैं और सत्य की प्राप्ति कर सकते हैं तो अपने संस्कारों और बुद्धि के अनुसार ही सत्य की कल्पना करते हैं परन्तु जब हमारी कुण्डलिनी हमें उस परम चैतन्य से संबंधित कर देती है तभी हम वास्तविक सत्य को जान पाते हैं औरगर ये नहीं होता तो बाकी सब व्यर्थ है। नानक साहब ने कहा है"सतगुरु वही जो साहेब मिली है" अर्थात सद्गुरु वही है जो परमात्मा की शक्ति से एकाकारिता करा देता है। सहज योग में हमें इसी की प्राप्ति होती है।

श्री कृष्ण पूजा वार्ता (सारांश)

मद्रास (9-2-90)

सहज योग का प्रारम्भ अति तुच्छ साधनों से हुआ और फिर यह नदी की तरह एक बड़े प्रवाह में परिवर्तित हो गया। इस प्रकार सहजयोग को यहां स्थापित कर पाने पर मैं अति प्रसन्न हूँ। आपको याद रखना है कि इस कार्य को करने के लिए ईश्वर ने आपको चुना है। सर्वप्रथम हमें परमात्मा के लिए कार्य करना है तब वह हमारे लिए कार्य करेगा। वह आपकी देखभाल करता है। आपपके व्यक्तिगत, सामाजिक तथा अन्य समस्याएं सुलझ सकती है। ईश्वर के प्रति समर्पित लोग अपनी समस्याओं को हल करने में समर्थ होते हैं। परम चैतन्य की शक्ति हमारा पोषण करती है, हमें रास्ता दिखाती है और हर चीज का आयोजन करती है। आशा के विपरीत भी आपके कार्य हो जाते हैं।

कुछ लोगों में बढ़ने के लिए सहयोग को काफी समय लगता है अतः स्वयं में पूर्ण विश्वास तथा धैर्य बनाये रखें। परमात्मा के शाश्वत प्रेम में जब हम बंधे है तो चिन्ता किस बात की। हर कार्य अत्यन्त सुन्दरता से हो जाता है। अपने आप में भरोसा रखना, हृदय की पवित्रता तथा परमात्मा के प्रति सच्चा प्रेम प्रथम आवश्यकता है। परमात्मा आपको कहीं अधिक प्रेम करते हैं परन्तु यह प्रेम एक पिता के प्रेम की तरह से होता है। यदि आप कोई गलती करते हैं तो पिता आपको सुधारते हैं। इसी प्रकार परम चैतन्य आपको सुधारता है। यह आपको इस प्रकार से शुद्ध करता है कि आप सबक सीख जाते हैं। अतः हमें सदैव याद रखना है कि हम परम चैतन्य नाम की महान शक्ति के अंग प्रत्यंग है। यह शकित अब बहुत सक्रिय हो उठी है।

जन-साधारण कार्यक्रम मद्रास

व्याख्यान

श्री माता जी निर्मला देवी

(13-2-1990)

सत्य बेचा नहीं जा सकता, इसे न तो बनाया जा सकता है न आयोजित किया जा सकता है और न ही इसे मस्तिष्क तथा भावना से समझा जा सकता है। अपनी विकास प्रक्रिया में हमने सत्य को सदा अपने मध्य-नाड़ी-तंत्र पर अनुभव किया है। उदाहरण के रूप में मैं इस नमूने को अपनी आँखों से देख रही हूँ और कुछ गर्म या ठंडा अनुभव कर रही हूँ। आप भी इसका अनुभव कर सकते हैं। इसी प्रकार सत्य को भी आप अपने मध्य स्नायु-तन्त्र पर अनुभव कर सकते हैं। आपके मध्य-स्नायु-तन्त्र पर इसे प्रकट होना ही है। यह केवल विचार मात्र नहीं हो सकता कि "यही सत्य है, वह सत्य है"। सत्य निर्बाध है और सब इसका अनुभव कर सकते हैं। जो पूर्ण है और निर्बाध है उसके विषय में न तो वाद-विवाद किया जा सकता है और न ही उसका अनुभव भिन्न भिन्न प्रकार का हो सकता है। यदि हम इस बात को प्रथम दृष्टया स्वीकार कर लें तो हम समझ पायेगें कि इस सत्य का अनुभव करने के लिए हमें मानव चैतना से आगे जाना होगा, और ईश्वर की सर्वत्र

व्यापक शक्ति ही यह सत्य है। प्रेम सत्य है और सत्य प्रेम है परन्तु यह प्रेम ईश्वरीय है। ईश्वरीय प्रेम किसी सीमा में नहीं बंधा होता। पेड़ के अन्दर का रस पेड़ के भिन्न भागों को जीवन प्रदान करता है और फिर वापिस आ जाता है। यदि यह रस केवल फूल पर ही टिक जाय तो पूरा पेड़ मर जायगा और अन्त में फूल भी मर जायगा। अतः यह प्रेम निर्लिप्त प्रेम है। इसी प्रेम ने पूरे ब्रह्मां पृथ्वी मां, और ग्रहों के मध्य की दूरी का व्यवस्थापन किया है। इसी ने हमारे विकास की व्यवस्था की है और हमें मानव चेतना स्तर पर लाया है। परन्तु मानव-चेतना पर्याप्त नहीं है। यदि ऐसा होता तो मनुष्यों के भिन्न-भिन्न विचार न होते। हर व्यक्ति समझता है कि वही ठीक है। परन्तु स्वयं को ठीक प्रमाणित करने का यह कोई तरीका नही है।

आधुनिक युग में ईश्वरीय प्रेम की बात करने वाले को लोग घिसा-पिटा समझते हैं। ईश्वरीय प्रेम तो शाश्वत है। कुछ समय के लिए यह कम हो सकता है। परन्तु हमारे उपकार और लक्ष्य प्राप्ति के लिए इसे वापिस आना पड़ता है। आखिरकार हम इस पृथ्वी पर क्यों हैं? हम उत्पन्न क्यों हुए हैं? हमारा लक्ष्य क्या है? क्या हर समय धन,सत्ता, संबंध तथा अन्य भावनात्मक चीजों के लिए संघर्ष करना ही हमारा लक्ष्य है या इससे ऊँचा भी कुछ है। यदि मैं यह कर रही हूँ कि हमारे चहुँ ओर सर्वत्र विद्यमान शक्ति है तो आप के अन्दर, यह समझने के लिए कि इस स्तर पर यह केवल एक परिकल्पना है जिसे मैं बाद में प्रमाणित कर दूँगी, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण होना चाहिए। परिकल्पना के साबित होने पर आपको इसे सत्य के रूप में स्वीकार करना होगा, ईमानदार व्यक्ति होने के नाते भी आपको इसे स्वीकर करना होगा। यदि यह मानव मात्र के मोक्ष के लिए है, यदि यह मानव जाति के उपकार के लिए है तो क्यों न इसे स्वीकार लें?

आरम्भ में ही मैंने आपको बताया कि सत्य बेचा नही जा सकता। परन्तु आज भी बाजार में बहुत से लोग सत्य, ईश्वर तथा बहुत ही चीजों को बेच रहे हैं। सत्य का धन से कोई सम्बंध नहीं है। पैसा मनुष्य की रचना है। परमात्मा से संबंध की कमी तथा संबंध की स्थिरता का न होना हमें इस सर्वत्र विद्यमान शक्ति का अनुभव नहीं होने देता। परमात्मा से संबंध स्थिर कर पाना संभव है। हमारे अन्दर साढ़े तीन लपेटों में कुण्डलिनी नामक शक्ति विद्यमान है। जागृत होकर जब यह छः चक्रों को पार करती हुई सहस्त्रार चक्र को बेंधती है तो आपकी हथेलियों तथा सिर के तालू भाग से शीतल लहरियाँ बहनें लगतीं हैं। अतः आपको स्वयं ही स्वयं को विश्वस्त करना है। कोई अन्य आपको सत्य के विषय में विश्वस्त नहीं करेगा। बीज का यह प्रथम अंकुरण है। यह एक जीवन्त क्रिया है और जीवित परमात्मा की जीवित शक्ति है। एक बीज की तरह से स्वतः ही इसका अंकुरण होता है। तब आप इस का आश्चर्यजनक तथा अनोखा प्रभाव अपने मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक व्यक्तित्व पर देखना शुरू कर देते हैं। यह एक ऐसा अवलोकन है जिस पर आपकी कल्पना की उड़ान भी नहीं पहुंच सकती। परन्तु आप वास्तव में वही यशस्वी वस्तु हैं। आपके अन्दर ही वह गौरव है और आप उसी गौरव के लिए तथा उसके सौंदर्य का आनन्द लेने के लिए बने हैं। आपको यह आनन्द लेना है। योग प्राप्ति तथा परम शक्ति से एकाकार आपका अधिकार है। यह सब स्वतः घटित होता है। सहज का अभिप्राय है साथ जन्म हुआ था सुगम।

कुंडलिनी हमारे अन्दर की शुद्ध इच्छा है। अर्थशास्त्र का विधान कहता है कि साधारण तथा इच्छाओं की पूर्ति नहीं होती। शुद्ध इच्छा न होने के कारण इच्छायें बढ़ती ही जाती हैं। शुद्ध इच्छा क्या है? आपको इस का ज्ञान हो या न हो परम शक्ति से एकाकार ही आपकी शुद्ध इच्छा है। जब तक यह इच्छा पूरी नहीं हो जाती

जीवन में आप संतुष्ट नहीं होगें। शुद्ध ईच्छा की यह शक्ति त्रिकोणाकार अस्थि में रहती है। यह जानना अति महत्वपूर्ण है कि कुंडलिनी मूलाधार चक्र से ऊपर मूलाधार में स्थित है। अतः जो लोग यह कहते हैं रति-क्रिया से कुंडलिनी जागृत होती है वे पूर्णतया गलत और वास्तविकता के विरुद्ध हैं। ये भ्रष्ट लोग है जो हमारी दुर्बलताओं के साथ खिलवाड़ करते हैं। मूलाधार चक्र हमारे श्रोणीय प्रदेश (पैल्विक पलैक्शन), जो कि हमारे यौन तथा मलोत्सर्जन के अंगों का उत्तरदायी हैं, की देखभाल करता है। उत्थान के समय हमारी सब गतिविधियां शांत हो जाती हैं और मनुष्य अबोध बन जाता है तब कुंडलिनी सहस्त्रार की ओर अग्रसर होती है।

कुंडलिनी का यह उत्थान पृथ्वी माँ के गुणों वाले या किसी सहजयोगी की मौजूदगी में होता है क्योंकि वह जानता है कि कुंडलिनी को किस प्रकार चढ़ाना है और साक्षात्कार किस प्रकार देना है। कुंडलिनी आपकी अपनी माँ हैं। आपके विषय में वह सब कुछ जानती है। वह आपके हृदय और मस्तिष्क के विषय में सब जानती हैं। त्रिकोणाकार अस्थि में बैठी यह अपनी जागृति के क्षण की प्रतीक्षा करती है। यह कहना कि इसकी जागृति से कष्ट होता है गलत है। अनाधिकार चेष्टा करने वाले लोगों के कारण कष्ट हो सकता है। जब हम बहुत अधिक सोचते हैं तो मस्तिष्क के सफेद-कण प्रयोग करते हैं। परन्तु इसका प्रतिस्थापन कैसे होता है? यह कण कैसे बढ़ते हैं? यह कोई नहीं जानता। स्वाधिष्ठान चक्र चर्बी के कणों को मस्तिष्क के प्रयोग के लिए परिवर्तित करता है। यह आपके जिगर, अग्नाशय, प्लीहा और आन्त्र तथा गुर्दे के भागों की भी देखभाल करता है, इसे इतना अधिक कार्य करना पड़ता है। यदि आप बहुत भविष्य वादी हैं , हर समय योजनाऐं बनाते हैं, बहुत अधिक सोचते हैं तो इस बेचारे चक्र को आपके मस्तिष्क के लिए सफेद कण बनाने का कार्य भी करना पड़ता है। परिणामतः ये सभी अंग उपेक्षित हो जाते हैं और इस प्रकार के लोगों को जिगर के रोग हो जाते हैं। आपका अग्नाशय यदि उपेक्षित हो जाय तो आपके शक्कर रोग हो सकता है। आपके स्वाधिष्ठान को जब कठिन परिश्रम करना पड़ता है तो इसकी समझ में नहीं आता कि क्या करें और क्या न करें। परिणामतः अग्नाशय की उपेक्षा हो जाती हैं।

स्वाधिष्ठान की अतिव्यस्तता का तीसरा शिकार प्लीहा होता है। प्लीहा शरीर का गतिमापक है। यह लय देता है। आजकल हम कुछ न करते हुये भी व्यस्त रहते हैं। प्लीहा आपात स्थिति के लिए अधिक लाल-रक्त-कोशिकाएँ बनाता है। जब हम समाचार-पत्रों में चौंका देने वाली खबरे पढ़ते हैं तो हमारे अन्दर आपात स्थिति बन जाती है। ऐसी स्थिति में प्लीहा क्रियान्वित हो उठता है। परन्तु यदि हम हर समय उत्तेजनापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं तो प्लीहा की समझ में यह नहीं आता कि इस उत्तेजित व्यक्तित्व का क्या करूँ? यह भी उत्तेजित होकर लाल-रक्त-कोशिकाएँ बनाता चला जाता है। अपनी लय भी नहीं रख पाता और मनुष्य की कैंसर, विशेषतया रक्त कैंसर, पीड़ित होने की संभावना बढ़ जाती है।

जब स्रोत से सम्बन्ध समाप्त हो जाता है तो नियंत्रण भी नहीं रहता। कैंसर रोगी के अन्दर रक्त कण निरंकुश रूप से चलते हैं तथा इस प्रकार विषाणुता प्रारम्भ हो जाती है और कैंसर रोग हो जाता है। जागृत होकर कुंडलिनी इन चक्रों में से होकर गुजरती है, इन्हें जागृत करती है, इनका पोषण करती है और इन्हें ठीक करती है। इस प्रकार आपका चित्त संबंधित चक्र पर आता है और समस्या का समाधान हो जाता है।

इसी प्रकार रक्तचाप, जो कि खराब गुर्दे के कारण होता है, तथा भविष्यवादी व्यक्तियों के कई अन्य रोग ठीक हो जाते हैं।

भविष्यवादी व्यक्तियों का सबसे बड़ा शत्रु यह सत्य है कि भविष्य का कोई अस्तित्व ही नहीं होता भविष्य में उनकी आशाएँ जब पूरी नहीं होती तो वे निराश हो जाते हैं। आशा निराशा के बीच में लटके रहने के कारण उनका व्यक्तित्व अजीब प्रकार का हो जाता है जिसके कारण उन्हें मनोदैहिक (साईकोसोमैटिक) रोग हो जाते हैं जोकि बहुत गंभीर है।

भविष्यवादी लोगों का सबसे बड़ा शत्रु, जोकि उनके दरवाजे पर प्रतीक्षा कर रहा होता है, दिल का दौरा है। यदि आप का चित्त बाहर की ओर योजनाएँ बनाने में, धर्नाजन में,सत्ता में छोटी-छोटी चीजों के लिए संघर्ष करने में लगा रहता है और अपने हृदय पर, भावनाओं पर यदि आप ध्यान नहीं देते, अपनी पत्नी और परिवार के लिए यदि आपके पास कोई समय नही है, तो आप एक शुष्क व्यक्ति बन जाते हैं। ऐसे व्यक्ति चाहे देखने में बहुत अच्छे लगें, वास्तव में अच्छे नहीं होते। वे अत्यन्त शुष्क होते है और भयानक दिल के दौरे के शिकार भी हो सकते हैं। कारण यह है कि हृदय में आत्मा का निवास है और यदि आप आत्मा की उपेक्षा करते हैं तो दिल का दौरा अनिवार्य है।

दिल दो प्रकार के होते हैं : अकर्मन्य और अति चुस्त। भविष्यवादी व्यक्तियों के चुस्त दिल होते हैं और इन्हें ही दिल के भयंकर दौरे पड़ते हैं जबकि अकर्मन्य हृदय वाले लोगों को कंठशूल (एन्जाइना) रोग हो सकता है। अतः सभी रोग, चाहे वे मानसिक हो, भावनात्मक हो, या अध्यात्मिक, सभी चक्रों की खराबी के कारण होते हैं।

महिषासुर मर्दनी पूजा वार्ता
श्रीमाता जी निर्मला देवी द्वारा
बैंगलोर (13-2-1990)
हिन्दी अनुवाद

सर्वप्रथम हर स्थान पर मनुष्य को श्री गणेश स्थापित करना होता है। जैसा कि आप जानते हैं कि श्री गणेश मंगल, पवित्रता और अबोधिता के स्रोत है। ये तीनों गुण श्री गणेश के विवेक से ही आते हैं। अतः आपके अन्दर का विवेक सर्वोपरी है। विवेक द्वारा ही आप जान सकते है कि मंगलमय और पवित्र क्या है। यह विवेक कोई संसारिक विवेक नहीं यह ईश्वरीय विवेक है जो उत्थान के साथ ही हमें प्राप्त होता है। अतः विवेक के स्रोत को स्थापित करना हर सहजयोगी का कर्तव्य है।

सहजयोगियों के लिए इस विवेक का स्रोत परम चैतन्य है या शुद्ध लहरियां। जब भी आप कष्ट में हों या पकड़ महसूस करें या आपके सामने किसी उचित अनुचित को स्वीकार करने की बात आयें, अच्छे बुरे का निर्णय करना हो तो सबसे पहली विवेकपूर्ण बात यह होगी कि आप इसे लहरियों पर परखें। हम सदा भूल जाते हैं कि हमें एक नई चेतना प्राप्त है, कि हम महान व्यक्ति हे, हम भूल जाते है कि हम सन्त हैं और ईश्वर ने हमें क्षण-क्षण के लिए एक विशेष चेतना प्रदान की है, जब भी हम अपने निर्णय लेने के लिए बुद्धि का प्रयोग करते हैं तो हम भटक जाते हैं। केवल लहरियाँ ही एक ऐसा साधन है जो आपको बता सकता है कि जो आप कर रहे हैं वह उचित है या अनुचित। यह आदत विकसित करना ही विवेक है और पहले की

तरह से बौद्धिक और भावनात्मक ढंग से निर्णय लेने की आदत अविवेक। कुछ लोग सदा कहते हैं कि मुझे अच्छा लगा। यह केवल बौद्धिक अभिवृत्ति है। कुछ लोग कहते हैं कि मैंने सोचा कि तार्किक रूप से यह इस प्रकार होना चाहिए। हमारे लिए केवल एक ही रास्ता है वह है परम चैतन्य या लहरियाँ और उनकी समझ। लहरियों के एकीकरण पर पूर्ण निर्भरता प्रथम विवेकशीलता है और अपनी लहरियों को स्थिर करना दूसरी। यदि आपकी लहरियां ठीक नही है या आप उनका अनुभव ठीक से नहीं करते हैं तो आपको अपने निर्णय भावनात्मक या बौद्धिक ढंग से लेने पड़ेंगे। परन्तु यदि आपके पास लहरियां हैं और आप उनका अनुभव कर सकते हैं तो आप सुगमता से उचित अनुचित का निर्णय कर सकते हैं।

तीसरा सत्य जो हमने जानना है वह यह है कि हम ईश्वर के साम्राज्य में प्रविष्ट हो चुके हैं। यह अन्धविश्वास नहीं है क्योंकि आप शीतल लहरियों का अनुभव कर चुके हैं। आप परम-चैतन्य का अनुभव कर चुके हैं। हम ईश्वर के साम्राज्य में प्रविष्ट हो चुके हैं इस बात पर विश्वास करने के लिए हमें अनुभव प्राप्त हो चुके हैं। इस परम चैतन्य के भरोसे सब कुछ छोड़ देना ही सर्वोत्तम हैं। परम चैतन्य सब ठीक कर लेगा। मान लिया मैं कहीं जा रही हूँ और ड्राईवर कहता है कि हम रास्ता भूल गये हैं इस पर मैं बड़ी शान्ति का अनुभव करती हूं। मैं सोचती हूँ कि मुझे इसी रास्ते से जाना है। मुझे आश्वस्त होना है। जब आप सब कुछ परम चैतन्य पर छोड़ देते हैं तो ऐसे बड़े-बड़े कार्य बन जायेगे कि आप दंग रह जायेगें कि यह कैसे हमारी समस्याओं का हल करता है, कैसे यह हमें रास्ता दिखाता है आप साफ-साफ देख लेते हैं। किसी कार्य को करने के लिए संघर्ष करते हुए जब आप यह कह देते हैं कि मैंने इसे ईश्वर पर छोड़ दिया है तो यह कार्य हो जाता है। परन्तु यदि आप संघर्षरत रहना चाहें तो परम चैतन्य कहता है कि ठीक है यदि तुम अपने प्रयत्नों को फलीभूत होते देखना चाहते हों तो लगे रहों और धीरे-धीरे आपके व्यवहार में परम चैतन्य लुप्त होने लगता है।

पूर्ण समर्पण तथा सहजयोग में गहन विश्वास चौथा विवेक तत्व है। आप सहजयोग में कितनी गहराई में हैं यह अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं यदि आपके अन्दर वह गहराई है तो वह कार्य करेगी। आपके माता-पिता हैं, परिवार है, बच्चे हैं, और आपकी समस्याएँ हैं परन्तु इन समस्याओं को हल करने के लिए आपको संघर्ष नहीं करना है। अपनी लहरियों को विकसित करने के लिए आपको कार्यरत रहना हैं। आप किस प्रकार विकसित होते हैं? आपको निर्विचार होना है। निर्विचारिता के बिना यह विकास संभव नहीं। जब आपको मेरे फोटो के सामने - बैठकर भी विचार आ रहे हो तो आपको निर्विचारिता का मंत्र "ओंम त्वमेव साक्षात श्री निर्विचारिता साक्षात श्री---------- नमो नमः" कहना चाहिए। निर्विचार अवस्था को स्थापित कीजिए। इस प्रकार आपकी बौद्धिक गहनता का विकास होगा।

हृदय की गहराई को विकसित करना आपकी एक और समस्या है। ध्यान में बैठने से पहले आपको कहना है कि श्रीमाता जी कृपया मेरे हृदय में आईये, श्रीमाता जी कृपया मेरे सिर में आइये।" तब आप ध्यान के लिए बैठिए और अपना हाथ अपने हृदय पर रख लीजिए। कुछ लोग केवल यह भी कह सकते हैं कि श्रीमाता जी मैं आत्मा हूँ। कृपया मेरे हृदय को खोल दीजिए" यह कहना सर्वोत्तम है। हृदय को खुलना अत्यन्त आवश्यक है। बन्द हृदय से आपका उत्थान नहीं हो सकता। कहिए कि "मुझे एक विशाल हृदय के सिवाय किसी चीज की आवश्यकता नही।" अपने प्रति अपने हृदय को खोलिए। हर समय स्वयं की चिन्ता न करते रहिये। कभी-कभी लोग अपने कठोर स्वभाव

नियम-निष्ठता और अनुशासन की डींग हांकते हैं। "मैं चार बजे उठा, स्नान किया और पूजा की आदि-आदि"। इस प्रकार के व्यवहार से आपके हृदय का वध हो जायेगा। किसी को भी अपनी अनुशासन बद्धता की डींग नहीं हाँकनी हैं। आप अपने आनन्द के लिए यह सब कर रहे हैं। ध्यान भी आप आनन्द के लिए कर रहे हैं पश्चाताप के लिए नहीं, केवल आनन्द के लिए। प्रातःप्रसन्न मुद्रा में उठिये, स्नान कीजिए तथा आशा और आनन्द के साथ दिन की शुरुआत कीजिए। आपको कठोरता पूर्वक स्वयं को अनुशासित नहीं करना है, स्वयं को प्रेम करना है और स्वयं का आनन्द प्राप्त करना है। मैंने देखा है लोग मेरी पूजा करते है, बड़े प्रसन्नचित होते हैं, आनन्दपूर्वक मालायें पिरोते हैं। और गाते बजाते हैं। दूसरी तरह के लोग वो हैं जो हर समय स्वयं को अनुशासित ही करते रहते हैं। "सदा यह करो", यह मत करो" कहते रहते हैं या फिर सोचते रहते है कि मां ने आना है समय बहुत कम है आदि-आदि। पूजा किसी औपचारिकता आदि के लिए नहीं होती। यह अपने प्रेम सागर में शारोबार होने के लिए होती है। अतः जल्दी मचाने की या चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं यह नहीं देखती कि आपने यहां क्या साज सज्जा की है या क्या कार्य किया है, जो भी आपने किया है प्रेम से किया है। आपके किये हुए में मैं दोष नही देखती। जो भी आप करते हैं सुन्दर है क्योंकि मैं केवल आपका हृदय देखती हूँ और यह कि आपने हृदय से क्या किया है। आप वृद्ध शबरी के विषय में तो जानते ही है। उसने कुछ बेर इकट्ठे किये और हर एक को अपने दाँतो से चखा। जब राम आये तो उसने कहा-खाइये। "क्योंकि आपको खट्टी चीजें पसन्द नहीं हैं अतः सबको चख कर केवल मधुर ही आपके लिए रखे हैं। अपने उग्र स्वभाव के कारण लक्ष्मण नाराज हुए कि इस नीच जाति की औरत का इतना साहस कैसे हुआ कि श्रीराम को इस ढंग से फल अर्पण करें। दूसरी ओर श्रीराम की आंखों से प्रेम अश्रु बह निकले और वह कहने लगें कि मैंने इतने मधुर बेर कभी नहीं खाये। सब कुछ समझ कर सीताजी ने भी कुछ फल खाने चाहे। फलों को खाते हुए सीता जी ने उन्हें अमृत तुल्य बताया। अब लक्ष्मण जी ने भी कुछ बेर खाने को मांगे परन्तु सीता जी ने कहा कि तुम बहुत नाराज हुए थे अतः तुम्हें बेर नही मिलेंगें। बहुत क्षमा मांगने पर लक्ष्मण जी ने भी कुछ फल खायें और उन्हें मधुर पाया। अतः सर्वोच्च ही प्रेम का प्रमाण है।

हर कार्य को बहुत प्रेम, सहजता तथा सुन्दरता से करना चाहिए। हर कार्य बहुत मधुरता से होना चाहिए। माधुर्य के बिना पपूजा आनन्ददायी नही होती। हर पूजा में मुझे आपको बताना पड़ता है कि ऐसा करो, वैसा करो। चिन्ता की कोई बात नहीं। बिना समझें लोग आयोजन शुरू कर देते हैं और यदि सब कुछ ठीक ठाक हो जाये तो भी आनन्दायी नहीं होता। कुछ दिलचस्प घटनायें होनी चाहिएँ, कुछ गलतियाँ होनी चाहिएँ जिससे नाटकीयता बढ़ें। हर चीज को गम्भीरता पूर्वक नहीं लेना चाहिए। यह पूर्णतया सत्य है कि हम जो भी हैं जैसे भी हैं प्रेममग्न हैं। प्रेम में आप बाकी सब कुछ भूल जाते हैं। प्रेम ही महत्वपूर्ण हैं। अगर यह अवस्था है तो हम वास्तव में हर चीज का आनन्द लेते हैं। विवेक की चरम सीमा केवल यह है क्या हम सहजयोग का आनन्द ले रहे हैं? यही मापदंड है। कहीं सहजयोग हमें भारी और कठिन तो नही लग रहा है? यदि हम आनन्द ले रहे हैं तो मेरा लक्ष्य पूरा हो गया है, क्योंकि मैं कार्य इसलिए करती हूँ कि आप किसी भी चीज के छोटे छोटे भाग का भी आनन्द लें। जो भी सुन्दर वस्तु आप देखें उसका आनन्द प्राप्त करने की योग्यता आप में होनी चाहिए।

सहजयोग एक फूल की तरह से है। यह सुगन्धी से परिपूर्ण है। इस सुगन्धी का आनन्द लेने वाले लोगों को जब में देखती हूँ तो मेरा दिल खिल उठता है। प्रसन्नचित, धर्मपरायण तथा आनन्दमग्न लोगों को देखना अति सुखद होता है। ऐसा दृश्य आप को और कहाँ प्राप्त हो सकता है। ऐसे लोग श्रीगणेश की तरह से होते हैं, नाचते हुए शिशु, जो हमें प्रसन्न भी करते है और हममें विवेक जागृत करने का प्रयत्न भी। इतने छोटे से शिशु का इतना महान व्यक्तिव। वे शाश्वत वात्सलय के शिशु हैं। अतः हमें अपने अन्दर श्रीगणेश का सौन्दर्य स्थापित करना चाहिए। बच्चों को तो आप देखते ही हैं, वे खिलौने से खेलते हैं और फिर उसे फेंक देते हैं, किसी चीज से उन्हे लिप्सा नहीं होती। बच्चे यदि किसी चीज की पकड़ में आ जायें तो वह बच्चे नहीं है। उनके लिए कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं फिर भी वे आनन्द प्राप्त करते हैं। बच्चों की तरह से लिप्सा विहीन होकर आपने सहजयोग को समझना है।

प्रारम्भ में हमें समझना चाहिए कि हमें देवी को प्रसन्न करना है। यदि देवी प्रसन्न है तो बाकि सभी देवी - देवता प्रसन्न है। जब मैं आप सबको एक परिवार के रूप में, एक दूसरे से प्रेम करते हुए, प्रेम और सहानुभूति पूर्ण सामूहिकता में देखती हूँ तो मैं बहुत प्रसन्न होती हूँ। आपका केवल यही गुण मुझे प्रसन्न रख सकता है।

ईश्वर आपको आशिर्वादित करें।

शिवरात्री पूजा चर्ता - पूना

श्रीमाता जी निर्मला देवी

23-2-1990

आज शिव रात्री है और शिवरात्री में हम शिव का पूजन करने वाले हैं। बाह्य मे हम अपना शरीर और उसके अनेक उपाधयाँ, मन, अहंकार..... और बाह्य में हम उसको चालना कर सकते हैं, उसका प्रभुत्व पा सकते हैं । इसी तरह जो कुछ अन्तारक्ष में बनाया गया है वो सब कुछ हम जान सकते हैं, उसका उपयोग कर सकते हैं । उसी प्रकार इस पृथ्वी में जो कुछ तत्व हैं और इस पृथ्वी में जो कुछ उपधा है सब को हम अपने उपयोग में ला सकते हैं । इसका सारा प्रभुत्व हम अपने हाथ पे ले सकते हैं । लेकिन ये सब बाह्य का आवरण है । जो हम अन्तरतम में हैं वो हम आत्मा हैं । शिव हैं । जो बाह्य में है वो सब नश्वर है । जो जन्मेगा वो मरेगा, जो निर्माण होगा उसका विनाश हो सकता है । किन्तु जो अन्तरतम में हमारे अन्दर आत्मा है, जो हमारा शिव है, जो सदा शिव का प्रतिबम्ब है वो अविनाशी है, निषकाम, स्वछन्द । किसी चीज में वो लिपटा नहीं निरंजन उस शिव के प्रकाश में आलोकित होते ही हम भी धीरे धीरे सन्यस्त होते जाते हैं। बाह्य में सब अवरण है। वो जहाँ के तहाँ रहते है । लेकिन अन्तरतम मे जो आत्मा, अचर, अटूट, अविनाशी है वो हमेशा के लिए अपने स्थान पे प्रकाशित होते रहता है ।

हमारा जीवन आत्म साक्षातकार के बाद एक दिव्य, एक भव्य, एक पावत्र जीवन बन जाता है इसीलिए मनुष्य के लिए आत्म साक्षातकार पाना अति आवश्यक है । उसके बगैर उसमें संतुलन नहीं आ सकता । उसमें सच्ची सामूहिकता नहीं आ सकती । उसमें सच्चा प्रेम नहीं आ सकता। और सबसे अधिक उसमें सत्य जाना नहीं जा सकता । सो सारा ज्ञान, उसकी शुद्ध ज्ञानता आ जाती है। जिसे की विद्या कहा जाता है वो इस आत्मा के प्रकाश में ही जानी जा सकती है । जब मनुष्य इस आत्मा के प्रकाश से आलोकित हो जाता है, तो उसका देखना भी निरंजन हो जाता है । वो देखना मात्र होता है। कोई चीज को देखते वक्त उसमें कोई उसकी प्रतिक्रिया नहीं होती है । देखता है और देखने से ही पूरा ज्ञान हो जाता है उस चीज का । तो मनुष्य हमेशा जब आत्म साक्षातकार से प्लावित नहीं होता तो वो एक तरह से अपने ही बारे में सोचता रहता है । वो यही सोचता है कि मैं आज क्या खाना खाऊँगा । क्या किसके यहाँ बडा अच्छा खाना मिला था । आज कौन से खाने का इन्तजाम करे। नहीं तो फिर ये सोचता है कि आज कहाँ मुझे जाना चाहिए । कौन सी जगह मेरा महत्व होगा । कौन सी जगह मुझे लोग मानेगें । कौन सी सभा में मैं जाकर चौंकूँगा । तीसरा सोचगा कि मैं कौन सा कार्य करूँ जिसके कारण मैं बहुत रुपया इकट्ठा कर लूँ, बहुत मेरे पास पैसा आ जाए । संसार की सारी सम्पत्ति में पा लूँ और दुनिया को मैं ठीक कर लूँ । चौथा सोच सकता है कि कितने मेरे बच्चे है, और इनके लिए मुझे क्या करना चाहिए और बच्चो के बच्चो के लिए क्या करना चाहिए, और मेरे रिश्तेदार है, और उनके लिए मुझे क्या करना चाहिए । इस प्रकार के जो कुछ विचार हैं, यह अपने में लक्षित हैं । कि उसमे मेरा क्या स्थान है । मै कहाँ हूँ । मेरा उसमे कौन सा विशेष लाभ होने वाला है। मै आज कौन से कपडे पहनूँगा । आज मै किसको किस तरह से प्रभावित करूँगा । कितना बांदया कितना होशियार, कितना चमत्कार । दूसरा है जो अपने को बहुत नम्रता पूर्वक सबके सामने बार बार झुके नमस्कार करेगा । ये दिखाने के लिए कि मैं बडा नम्र हूँ और मे सबसे बड़े आदर से रहता हूँ। बहुत ज्यादा संस्कृती से भरपूर हूँ । कोई तीसरा कहेगा कि मै विद्यवानो की सभा मे जाकर वाद् विवाद करूँगा। मै बहुत सारी किताबें पढूँगा उससे मै अपनी बुद्धि को बड़ा प्रबल कर लूँगा । मैं बुद्धि से बहुत अपने को ऐसा विशेष रूप से प्रकाशित करूँगा कि लोग सोचेगें कि कितना बड़ा लेखक है, कि कितना बड़ा वक्ता है, कितना बड़ा बोलने वाला है । फिर इसी प्रकार कोई अपने संगीत के बारे में सोचता है, तो कोई अपने कल के बारे में सोचता है । हर चीज में आदमी इसमें अपने बारे में सोचता है कि मेरी प्रगति कैसी होगी उससे मैं क्या करूँगा और बहुत से समाज कार्य भी लोग करते हैं । जैसे कि कोई आदमी अगर डूब रहा है तो उसको बचाने के लिए कोई आदमी कूदता है तो वो भी यही सोच के कि उसके अन्दर जो कुछ मैं है वो उस आदमी में भी है इसलिए वो उसको बचाता है । उसको पहचान नहीं होता कि आदमी डूब रहा है इसलिए उसको बचाता है । और उससे भी ऊँचे कार्य मनुष्य करता है । अपने देश के लिए बहुत त्याग करता, है इसलिए कि मेरा देश है । मेरे देश को सुख होना चाहिए । इस तरह से उसमें भव्यता आने लगती है । उसमें महानता आने लगती है । फिर कोई सोचता है कि मेरी जो कला है, वो ऐसी फैलनी चाहिए कि विश्व में हमारे देश की कला फैले। इस तरह से मनुष्य

अपने आप को सामूहिकता में अपने आप को घुलते देख कर खुश होता है । पर उस सब में अपेक्षित होता है कि उसे विजय मिले उसका यश गान हो । लोग उसकी वाह वाह करें । यह अपेक्षित रहता है, इस लिए वो सुख और दुख के चक्कर में फँस जाता है । यह अपेक्षित रहता है कि उसका नाम सब जगह छपे, लोग उसको बहुत माने और उसकी बड़ी मन्यता रखें और कहीं भी वो खड़ा हो तो कभी भी वो अपमानित न हो । कोई उसको किसी भी तरह से नीचा न कहे । कोई भी कितना भी बड़ा संयोजक हो गर वो आत्म साक्षातकारी नहीं है तो उसमें उसका जो बिन्दू आप अपना है, मैं हूँ, जो मै का बिन्दूं है, वो कितना भी बड़ा उसका परिग बन जाए । पर उसका चित्त उस में दे ही रहता है । उस पर्नाग ? में उसका चित्त नहीं जाता ।

किन्तु जब आप अपने आत्मा से एकाकारिता प्राप्त करते हैं, तब वो और तरह से बात सोचता है। तब वो हर चीज को इस तरह से सोचता है कि इसका उपयोग समाज के लिए कैसे हो सकता है, दुनिया के लिए कैसे हो सकता है । इस आतंरिक पीडा के लोग हैं । इनके लिए क्या हो सकता है। इनके लिए क्या करना चाहिए । उसका सारा ही विचार अपने से बदल के उन चीजों की ओर जाता है । जब किसी पेड को देखता है, उस पेड को देखते ही वो सोचता है विधाता ने कितना सुन्दर ये पेड बनाया हुआ है । काश कि मैं भी ऐसा सुन्दर होता । काश कि मैं भी ऐसा छाया पद होता कि लोग मेरे छाया में आकर के बैठते । किन्तु मैं ऐसा नहीं। मुझे ऐसा ही होना चाहिए। उस पेड की स्तुति में वो गाने लग जाए । किसी हिमालय को देखेगा तो हिमालय की ही स्तुति गाता रहेगा। लेकिन जो मनुष्य आत्म निष्ठ नहीं होता है । जो अपनी आत्मा को जानता नहीं वो हमेशा अपनी ही स्तुति गाता रहता है, कि मैं हिमालय पे गया था, मैने हिमालय पे ये काम किया । हिमालय में मेरी कब्र बना देना । हिमालय पे मेरा देश का झंडा लगा देना । इस प्रकार एक दम दो लैवल, दो तक्ते व्यक्ति हैं । एक जो कि आत्म साक्षातकारी है, आत्मा के प्रकाश में अपने को सारी चीजों की ओर दृष्टि डालते वक्त एक व्यापकता से देखते हैं और दूसरी बात कि उनमें यह कभी धारणा नहीं होती कि यह कार्य करने से मेरा नाम बढ जाए, या मेरा यशगान लोग करें । कोई बेशक उन्हें मार भी डाले, सताये, छले, या बुराई करें, वो कभी भी इस चीज का बुरा नहीं मानते। जैसे की आप देख सकते हैं इसामसीह को सूली पे चढाया गया । सूली पे चढने के वक्त उन्होंने एक प्रार्थना की कि है जगदीश ये लोग जानते नहीं कि ये लोग क्या गलती कर रहे हैं कि इनको तुम माफ कर दो । तो ऐसा जो आत्म साक्षातकारी होता है वो निसफल होता है । उसके अन्दर किसी चीज की खिचाव नहीं रहती। यह चीज होना ही चाहिए । यह बनना ही चाहिए । वो संकल्प नहीं करता हो जाएगा तो अच्छा, और नहीं हो जाएगा तो भी अच्छा और जब वो किसी यश और जय को स्मरण नहीं करता है, उसकी अपेक्षा ही नहीं करता है । तो उसको सुख और दुख का चक्कर आता नहीं । सुख और दुख में वो समान हो जाएगा । कोई दुख आया तो उसे भी देख सकता है, सुख आया उसे भी देख सकता है और

वो समझता है कि वो रात और दिन का मामला है । खुद वो स्वंय आनन्द में विभोर है क्यौंकि आत्मा आनन्द का ही स्रोत है । वो किसी भी चीज की लालसा नहीं करता और होती ही नहीं। उसको कभी भी अपने मन को (कन्ट्रोल) काबू में नहीं लाना पडता । कहते हैं अपने मन व इन्द्रियों को काबू करिए। वो पूरा काबू में आ जाता है । कोई Temntation नहीं होत, कि ये चीज मुझे चाहिए ही और उसके लिए प्राण लगा रहे हैं । लोग हैं कि कोई न चीज के प्रलोभन में इस तरह से दौडते हैं कि जैसे कि उनके लिए वो ही सब कुछ जिन्दगी है और जब वो चीज मिल जाती है उसके बाद फिर दूसरे चीज के लिए दौडने लग जाते हैं । अगर वो नहीं मिलती है तो फिर उनको इतना दुख होता है कि वो सोचते हैं कि मेरे जिन्दगी का सब कुछ खत्म हो चुका । फिर ऐसा मनुष्य का जो चित्त होता है, वो बहुतकार और हर चीज को जानता हुआ चलता है। इसके चित्त में ये शक्ति होती है कि उसका चित्त जहाँ भी पहुँच जाए, वो चित्त स्वंय ही कार्यान्वित हो जाता है ।

अब चित्त जो है ब्रम्हदेव की देन है । लेकिन जब ब्रम्ह देव या ब्रम्हदेव का सिर्फ ब्रम्ह ही रह जाता है तो ऐसा चित्त इतना प्रभाव-शाली होता है, इतना प्रेममय होता है, इतना सूझबूझ वाला होता हैऔर इतना होशियार होता है कि वो अपने कार्य को बडे ही सुगम तरीके से कर लेता है। मतलब ये कि ऐसे आदमी का चित्त परम चैतन्य से एकाकारिता प्राप्त कर लेता है और जब ये हो गया तो परम चैतन्य तो सारे कार्य को करता ही रहता है । तो जितने भी कर्म है दुनिया के वो सिर्फ ये ब्रम्ह शक्ति, ये परम चैतन्य करती है और ये जो कर्म मनुष्य कर रहा है वो उस वक्त ये नहीं सोचता कि मैं कर रहा हूँ । उसको इसकी अनुभूति ही नहीं होती । वो तो यही सोचता है कि हो रहा है । यह घटित हो रहा है । बन रहा है । अकर्म में जिसको कहते हैं उतरना क्यूँकि परम् चैतन्य ही सारे कार्य कर रहे हैं तो मैं एक माध्यम बीच में हूँ । आत्मा के प्रकाश से ही यह हो सकता है । नहीं तो मनुष्य कहता है कि मैं सारे कार्य करता हूँ परमात्मा पर छोड दे । पर छोड नहीं सकता। सच बात यह है कि परम चैतन्य ही सब कार्य को कर रहा है, बहुत सुगम तरीके से । इतना सुन्दर उनका कौशल है, नियुक्तियाँ है कि आश्चर्य में मनुष्य पड जाता है कि किस तरह वो कार्य करता है। और जब मनुष्य श्रद्धा स्वरूप अपने एक विशाल ----- कर्म तो हम नहीं करते । कर्म तो चैतन्य कर रहा है । सारा कर्म वे करते हैं, हम तो सिर्फ किसी मरी हुई चीज को बना सकते हैं जैसे चांदी से गहने। तो सोचते हैं कि बडा कुछ बना दिया । हम तो मरे से मरा बनाते हैं । लेकिन सारा जीवन्त कार्य जो है, परम चैतन्य करता है । और ये जो परम चैतन्य की जो हमें देन मिली हुई है और उसका जो हमें अनुभव हुआ है वो सारा आत्म साक्षात कार से है । क्यूँकि परम चैतन्य जो है वो आदि शक्ति है जो कि शिव की इच्छा शक्ति है । उसी का प्रकाश है । इस परम् चैतन्य के आर्शीवाद से ही आप लोग सारे कर्म करेगें । जिससे ये आपमें घटित हो जाए । आप अद्भुत लोग हो सकते हैं ।

लेकिन मैं यह कर रहा हूं, यह जब भावना आई, और मैंने ये किया और "मै" ये करना चाहता हूं । या कोई जोर जबरदस्ती किसी भी चीज की तो इसका मतलब ये है कि आत्मा का प्रकाश पूरी तरह से आपके अन्दर अभी नहीं आया है । तो आप अकर्म में आ गये जब आप कोई कार्य ही नहीं कर रहे। जैसे की ये वक्तव्य कहें कि मैं बिजली दे रहा हूं । तो गलत बात है। आपके अन्दर वही परम चैतन्य कार्य कर रहा है जो लोग आत्म साक्षातकारी है । जिसने आपको बनाया, बढाया आपका शरीर सब चीज जो बनी है वो उसी परम चैतन्य की कृपा से बनी है। और उसके बाद आज आप जो मनुष्य बनके भी आप जो आत्म साक्षातकारी बन गए वो भी उस परम चैतन्य का ही आशीर्वाद है । तो ऐसे मनुष्य में अहंकार कैसे आ सकता है । जब वो जानता है कि मैं कुछ भी नहीं कर सकता । कृष्ण की मुरली ने कहा कि मुझे लोग क्यूं कहते हैं कि मैं बजती हूं पर मैं तो खोकली हूं। सो वो खोखलापन जिसको Egolessness अहंकार रहित कहते हैं पूरी तरह जब हमारे अन्दर स्थापित हो जाता है तब हम सोच सकते हैं कि हमारे अन्दर जो यह विचार था कि हम ये कार्य करते हैं वो कार्य करते हैं कितना दुख दायी था । कितना परेशान करने वाला । क्यूंकि मैं यह कार्य कर रहा था और "मैंने" ये कार्य किया और उस कार्य का कोई "रबड" ही नहीं निकला, इसलिए मैं दुखी हो जाता हूं। मैंने यह कार्य किया और इसमें मुझे बडा यश मिल गया तो और मेरा दिमाग खराब हो जाता है । किन्तु मैंने यह कार्य नहीं किया । करने वाला परम चैतन्य का सारा कौशल्य है । तो जो हुआ सो ठीक ही है । गर समझ लीजिए हमारा रास्ता कहीं खो गया, हम गलत रास्ते से आ गए । उस समय कोई यह सोच सकता है कि मैं गलत रास्ते से आ गया । बडी गलती हो गई । लेकिन एक आत्म साक्षातकारी सोचता है कि यहां से जाना जरूरी होगा इसीलिए मैं जा रहा हूं । तो उसको दुख नहीं होने वाला उसको आप महलों में रखिए वो राजा जैसे रहेगा । और आप उसको जंगलों में रखिये तो जंगलों में रह लेगा। उसको कोई शिकायत होगी कैसे जबकि वो जानता है कि परम चैतन्य ही मुझे इधर से उधर हटा रहा है । उसको मारो या हार पहनाओं दोनों उनके लिए ठीक है । क्यूंकि आत्मा जो है वो किसी चीज में चिपकता नहीं । जब आप किसी चीज में चिपक जाते हैं जैसे कि मेरी प्रतिष्ठा में बडा आदमी , मैं छोटा आदमी, ऐसा वैसा । तब आपको लगता है कि इन्होंने मेरे साथ ऐसा क्यूं किया । लेकिन असंग में जो आदमी बैठ गया उसको यह महसूस ही नहीं होता वो अपने आत्मा में ही तुष्ट रहता है। जब बोलना है तब बोलता है । नहीं बोलना है तब नहीं बोलता । किसी ने कुछ कह दिया उसे सुन लेता है, गर कुछ ज्ञान की बात हुए तो उसे सुन लेता है और अज्ञान की बात होए तो उसे भी सुन लेता है । लोगों के बा में उनके दोष न गुण का वर्णन मात्र कर देगा पर यह नहीं कहेगा कि मुझे इनसे नफरत है । क्यूंकि घृणा करना एक पाप है और इसलिए उससे कोई पाप ही नहीं हो सकता । जो भी वो करेगा वे पुन्य होगा । समझ लीजिए देवी है, वो भूतों को मारती है। वो कोई पाप नहीं। वो नहीं मारे तो पाप फैलेगा । तो वो अपने काम से चूकता नहीं । क्यूंकि परम् चैतन्य मार रहा है मैं कहां मार रहा हूं । लेकिन परम चैतन्य की गवाही देने से पहले उसे एककारता तो स्थापित होनी चाहिए

गर आप में यह स्थिति है और आप उस ऊँची दशा पर पहुँच गये कि जहाँ पर आप परम चैतन्य से एका कारता प्राप्त है उसके लिए आप कह सकते हैं । बडे बडे सन्तो ने इतना बता दिया उसके मुँह पर और डरे नहीं । साक्रेटीस को सत्य बोलने के लिए जहर दिया गया। उसको कोई भी प्रलोभन दो, कुछ भी कहो वो जिसे सत्य समझता है वो ही बोलेगा । क्यूँकि परम चैतन्य सत्य ही बुलवाएगा । और वो सत्य निष्ठ होगा । उसकी बुद्ध सत्य व असत्य की पहचान जाएगा । कौन सच्चा है कौन झूठा है एक दम समझ जाएगी । क्यूँकि उस बुद्धी पर आत्मा का प्रकाश आ गया वो सुबुद्ध हो जायेगी। एक नजर से वो पहचान सकता है कि कौन कितने-गहरे पानी में है और फिर उसको सब परम चैतन्य ही बता देता है । सो परम चैतन्य का करना धरना और उसका ही सब कुछ पाना है और उसका उपभोग हम नहीं उठा सकते। उसका उपभोग भी परमात्मा ही उठाते हैं । हम तो सिर्फ उनकी लीला ही देखते रहते हैं और गर हम किसी चीज का भोग उठा ही सकते हैं तो उस आत्मा के ही लीला का भोग उठा सकते हैं । अब आध्यात्मक ? जो है वो उस आत्मा के प्रकाश का, उसके कार्य का, उसके लीला का, सबका एक तरह से विज्ञान है । उसका साईन्स है, गर जो सच्ची तरह से इस चीज में समझ लें, जो समझ सकता है कि सारी सृष्टि का विज्ञान ही आत्मा से आता है और जब तक ये विज्ञान हमारे अन्दर नहीं आयेगा तो बाह्य का विज्ञान बिल्कुल ही बेकार है क्यूँकि उसमें बहुत ही थोडीसी चीज है विज्ञान की कि वो जड वस्तुओं के बारे में वो आपको समझा देता है । उसमें संतुलन नहीं है । उसमे सामाजकता नहीं है । उसमें मनुष्यता नहीं है, और उसमें प्रेम नहीं है, उसमें कला नहीं है, उसमें कादता नहीं ह । उसमें आदर नहीं है, कुछ जो कि मनुष्यी चीज ही नहीं है । एक मशीन जैसी चीज हो जाती है। विज्ञान को समझने के लिए भ्म मनुष्य को आत्मा का प्रकाश चाहिए । आत्मा के प्रकाश से आप विज्ञान के बहुत से छोर खोल सकते हैं, जो अभी तक नहीं खुले और विज्ञान जाकर उसका पता लगाये । वे लेकिन सब जाना ही हुआ है । जिसने सब कुछ जाना हुआ है उसको जरूरी नहीं कि वो सब कुछ सबको बताये । क्यूँकि सबको समझना भी तो आना चाहिए । जिस वक्त मौका आयेगा उस वक्त उसे समझाना चाहिए । इससे, सहजयोग में भी बहुत से लोग परेशान हो जाते हैं । मेरा बाप सहज योग में नहीं, मेरी माँ, मेरा भाई इत्यादि सहज योग में नहीं । जाने दीजीए । आप तो हैं न । आप अपने साथ रहिए । जितना मनुष्य अपने साथ आनन्द में रहता है किसी के साथ इतना नहीं रहता क्यूँकि सारा कुछ आप ही के अन्दर है । इसलिए ये नहीं है उसमें वो नहीं है इसमें, इस तरह की बातें सोचना, फिर यही विचार आता है कि अभी पूरे दालान हमारे हृदय के खुले नहीं। इसलिए हम ऐसा सोचते हैं । जो अब आत्मसाक्षातकारी यही आपके बाप भाई बहन हैं, और इनको तो कोई प्रश्न नहीं। यह प्रश्न उन लोगों को होता है जो अभी भी आधे अन्धकार, आधे प्रकाश में हैं । वो ये सोचते रहते हैं अभी ये मेरा भाई । उसमें फंसा हुआ है, इत्यादि । अपने आप से वो आ जायेगें किसी से जबरदस्ती नहीं हो सकती । इसी तरह का एक आत्म साक्षातकारी नहीं-सोचता है। वो सब को देखते रहता है और आनन्द उठाता है । मनष्य के पागलपन में भी वो आनन्द उठा लेता है और उसके स्यानेपन

में भी वो आनन्द उठा लेता है । कोई गर बेवकूफी की बात करता है तो उसका भी आनन्द उठा लेता है और कोई समझदारी की बात करता है तो उठा लेता है । सब चीज में उसे एक आनन्द का सोप दिखाई देता है कोई मनुष्य अगर विक्षिप्तता से रहता है तो कहता है कि यह कैसा एक नाटक है। जब एक आत्म साक्षात्कारी क्रोधी मनुष्य को देखता है तो उसे क्या लगता है, वाह । क्या क्रोध चढ रहा है। अब तो और भी चढ गया । अब तो सिर्फ आज्ञा चक्र में था और अब तो सहस्तार में भी चढ गया। उसको घबराहट नहीं होती । उसमें जो यह दृष्टि है इसकी ये किसी में उलझी हुई दृष्टि नहीं है । जिसे निरंजन दृष्टि कहें या साक्षी स्वरूप में । वो सारे समाज का इतना सुन्दर चितरण कर देता है कि हंसी आ जाती है । यानी गम्भीर से गम्भीर बात में भी आप समझ सकते हैं कि बहुत सी बातें ऐसी हैं जो दिखने को गम्भीर लगती हैं लेकिन उसमें एक तरह का छिपा हुआ बडा संदेश है। वो जो उद्वेगनता हमारे अन्दर आ जाए, आत्म साक्षातकारियों को तो फौरन इसकी खबर चली जाएगी परम् चैतन्य में और जो आतातायी ये काम करेगा उसको ठिकाना हो जाएगा। वो उद्वेगनता भी एक तरह से कार्यान्वित होती है । कोई आल्लाहदायी चीज होगी वो तो ठीक ही है लेकिन कोई ऐसी भी चीज हो जिसको देखकर उद्वेगनता आए और मनुष्य सोचे ऐसे कार्य क्यूं हो रहे है । ऐसे नही होने चाहिए । फौरन उसका इलाज हो जाएगा । जब मै रूस पहले बार गई थी तो वहाँ योग का एक सैमिनार होने वाला है । तो हमारे घर में ये कहा गया कि अभी अभी जाके आए हो, तो फिर सिर्फ दो दिन के लिए जाओगे । क्या फायदा है । मैने कहा मुझे वहाँ जाना जरूरी है, क्यूँकि वहाँ जो इस्टर्न ब्लाक है उसको तोडना क्यूँकि वहाँ इस्टर्न ब्लाक मे सभी आयेगे, और उन में से जो लोग पार हो जायेगे वो जाते ही वहाँ से परम चैतन्य अपना काम कर लेगा । मैं यहाँ सिर्फ पैतालीस मिनट बोली और पन्द्रह मिनट में Realization दिया और उसके बाद वो लोग अपने देश मे गए और वहाँ ये कार्य हो गया। सो परम चैतन्य के कार्य के लिए जरूरी है कि आत्म साक्षातकारी लोग हो । ये उनका परम चैतन्य का कार्य आत्मसाक्षातकारी लोगो के इच्छा के अनुसार होता है । गर आपकी इच्छा हो तो वो कार्य हो सकता है । पर आपकी इच्छा मे भी शुदता होनी चाहिए । ऐसी इच्छा नही जिसमे आप स्थार्थी हो, या अपने ही बारे मे सोचते है, क्यूँक ये कार्य आत्मा के ही बल पर होता है और जो आत्मा जो अपना शिव है, वो बिल्कुल स्वछन्द, निस्फुह, निराकार, निरन्तर और नित्य, है । इस लिए जो मनुष्य आत्म साक्षातकारी हो जाता है, उसमे ये सारे ही गुण आ जायेगे । ये गुण अगर आप के अन्दर नही आए जैसे बाह्य से आप मे सारे आवरण हो आप राजा हो, आप चाहे कुछ भी हो, अन्दर से आप निसफूह है। अन्दर के आप छूटे हुए है । अन्दर से आप किसी चीज को छिपकते नही । अन्दर से आप किसी को देख नही करते । किसी के लिए आपको लालसा नही होती । ये सारे तो आप ही आप छूट जाने चाहिए । तो आत्मा का सबसे बडा प्रकाश यही है कि आपको कोई प्रयत्न नही करना है । किसी को वश मे रखने की जरूरत नही । जैसे आप आत्म साक्षातकार मे ही उतरते जाते है उस प्रकाश मे अपने अंधता दूर ही हो जाते है और ये बडा भारी लाभ है और जिसने इस लाभ को अभी तक प्राप्त नही

किया उसे ये सोचना चाहिए कि अभी हमारा आत्म साक्षातकार पूरी तरह से फलित नही हुआ। अगर ये पूरी तरह से फलित हुआ है तो हमारे जीवन मे हमारे आस पास के समाज मे हमारे सहजयोग के समाज मे हर जगह एक नवीन तरह का मनुष्य तैयार होना चाहिए जो आत्मा स्वरूप है । जो आत्मा के प्रकाश से प्लावित है । जिसमे शिव का दर्शन होता है । जब शिवजी का विवाह हुआ तो वो बिल्कुल वैसे ही रूप मे गए जैसे रहते थे । इसका अर्थ ये है आपके पास शारीरिक कोई भी व्यग ही पर जब तक आपके आत्मा का प्रकाश आपके अन्दर है, कोई सी भी आपकी शक्ल हो, कैसे भी आप हो, पर अगर आत्मा का प्रकाश हो तो शिव आपको मानते है । वो निसंग है । इसमे हमारा दो अग दिखाई है । एक तो हमारा अग कि जो आज हम विष्णु स्वरूप है जो बाह्य मे है और अन्दर का अग जो है वो हमारे शिव है और उसी शव के जैसे हमे निस्पृह, स्वछंद और निहासक्त होना चाहिए । किसी चीज की आसक्ति हमारे अन्दर नही आ सकती गर हम आत्मा स्वरूप है । फिर बाह्य मे आप श्री कृष्ण हो जाएँ या आप और कोई हो जाए लेकिन अन्दर का जो शिव है वो अपनी जगह स्थित रहेगा । बाह्य का अग जो है वो महत्वपूर्ण अब नही रहा जब कि आप आत्मा स्वरूप हो गए । तब इन सब चीजो के लिए आपकी जो भावनाए है वो एक दम बदल जाएगी । श्री ऐकनाथ जब द्वारका गए तो उन्होने एक कावट पानी से भरकर भेट के तौर से ले गए । लेकिन उन्होने देखा कि एक गधा प्यास से मरा जा रहा था । उन्होने उसको अपना पानी पिला दिया । लोगो ने कहा क्या करते हो इतनी दूर पैदल चल के आप पानी भर के लाए, और इस गधे को पानी पिला दिया । तो उन्होने कहा मेरा श्री कृष्ण यहाँ तक उतर के आया पानी पीने । ये जो भक्ति का सूक्ष्म भाव है वो एक आत्म साक्षातकारी ही समझ सकता है । कि बाह्य को देखना कि हम कावड लेके गए, और "हमने" जा के उनको समर्पित किया। हम कौन होते है ? जब "हम" भाव नही रहा और परम चैतन्य ये कार्य कर दिया इस पागल दुनिया मे वो आए किसी ने समझा नही उन्हे और उन्हे परेशानी और तकलीफे दी । क्योंकि वो आत्म स्वरूप थे, वो शिव मे स्थित थे, वो शिव स्वरूप थे । जो ऐसा मनुष्य है वो बाह्य मे कैसा भी रहे उसकी शिव स्थिति बाह्य मे भः प्रकाशित रहती है । सबसे बडी चीज है अवदारी । अवदारी चीज जो है ये शिव की शक्ति है । इससे इतना उदार हृदय जो है कि शिव ने राक्षसो तक को वरदान दिया । जो सब चीज को जानते है । इसी प्रकार जो शिव मे स्थित है वो अपने मे बडा समाधानी होता है और सब कुछ जानता है । समझता है । कहेगा नहीं । लेकिन वो सब जानता है और सबसे बडी शिव की शक्ति है प्रेम । निर्वाज्य प्रेम-जिसमे कि कोई ब्याज नही देना । बहता हुआ। उनकी करुणा की शक्ति इतनी जबरदस्त है कि उस करुणा को देखकर के आप भी अचम्भे मे पड जाएंगे । इसी तरह एक आत्म साक्षातकारी मनुष्य कर करुणा का भाव बढता है और उसकी जो नशा चढती है वो ऐसी नशा है कि अकेले चमजा नही आता । उसकी प्रवृत्ति ही ऐसी हो जाती है, कि वो अत्यन्त शक्ति शाली हो जाता है, उसका भय, या आशकाएं सब खत्म हो जाती है और बहुत ही सुन्दर कार्य को बडे खूबी से कर लाता है । और कोई चीज समझाता भी इतनी सुन्दर तरह से है । और जैसे कई सहज योगी सीधे

मुँह पर कह देते है कि तुम्हे भूल लग गया, ऐसा नही कहना चाहिए । तो अगर किसी का अहंकार भी तोडना है तो अगर आप सिर्फ सोच लेगे कि वे अहकारी है तो परम चैतन्य उसकी व्यवस्था कर देगा और उसका अहंकार टूट ही जाएगा । पर सबसे पहले एक आत्म साक्षातकारी मनुष्य को यही सोचना चाहिए कि मै अब शिव मे शरणागत हूँ । मेरी आत्मा मे मै शरणागत हूँ और मेरे आत्मा के ही कारण ये परम चैतन्य ये सारा कार्य करने वाला है और इसलिए मुझे कोई किसी चीज की चिन्ता नही । मेरा कौन बैरी है । कौन मुझे मार सकता है । मै तो परम मे जी रहा हूँ । सारा कार्य ये कर रहा है तो मै कौन सा कार्य कर रहा हूँ । इस तरह की जब भावना हो जाए तब कहना चाहिए कि हमारे अन्दर शिव को हमने पहचाना है । हम बाह्य कि अपने शरीर वगैरह सबको खूब समझते हैं पर इस शिव को पहचानना चाहिए जो हमारे अन्दर है । जो हमारी ही सारी शक्ति का आधार, जिसे कि हम सत्त चित्तानन्द कहते है, उस शिव को ही हमे मानना चाहिए ।

आप सबको आनन्त आर्शीवाद ।